RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-17, अंक-1, दिसम्बर 2023 जनवरी फरवरी 2024

रासो
त्रैमासिक शोध पत्रिका
2005
॥ स्वस्ति पन्थामनु चरेम् ॥

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-17 अंक - 1 दिसम्बर 2023-जनवरी-फरवरी-2024

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टिट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** - पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** - प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** - प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** - पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** - पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** - सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** - पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** - आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** - पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

शिक्षा दर्शन की प्रमुख अवधारणाएँ

सुर्मिला यादव
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

दर्शन का अर्थ एवं व्याख्या

'दर्शन' शब्द अंग्रेजी के 'Philosophy' का रूपान्तर है, जिसका मूल ग्रीक भाषा में है। ग्रीक के दो पद–'फिलोस' तथा 'सोफिया' को मिलाकर 'Philosophy' बना। 'फिलोस' से आशय है प्रेम, अनुराग या लगाव, और 'सोफिया' का अर्थ है ज्ञान या प्रज्ञा। अत: दर्शन का शाब्दिक अर्थ हुआ–'ज्ञान का प्रेम, ज्ञान का अनुराग तथा सत्य की खोज'। इस दृष्टि से दर्शन केवल कोई विषय नहीं, अपितु जीवन-दृष्टि है; सत्य की निरन्तर खोज और उसकी अनुभूति का मार्ग। प्राचीन विचारक प्लेटो ने अपनी कृति 'रिपब्लिक' में स्पष्ट किया कि जो मनुष्य ज्ञान प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयासरत रहता है, नये तथ्यों एवं सिद्धान्तों को समझने में रुचि रखता है, तथा जो प्राप्त ज्ञान से कभी संतुष्ट नहीं होता–उसे दार्शनिक कहा जा सकता है। इस प्रकार दर्शन मात्र बुद्धि का खेल नहीं, बल्कि विश्व और जीवन के स्वरूप को समझने का सतत् प्रयास है।

दर्शन सामान्य बुद्धि वाले व्यक्ति का साधारण कार्य नहीं, बल्कि सारभूत सत्यों की खोज का वह अनुशासित विज्ञान है जो सूक्ष्म दृष्टि का विकास करता है। हैण्डरसन तथा उसके सहयोगियों ने इसे मानव द्वारा अनुभव की गयी 'सबसे जटिल समस्याओं का अनुशासित, सावधानीपूर्ण और तर्कपूर्ण विश्लेषण' कहा। इस विश्लेषण में वस्तुओं के बाह्य रूप से बढ़कर उनके गूढ़ स्वरूप को समझा जाता है, जो विज्ञान, तर्क, अनुभूति, अनुभव तथा विचारों का समन्वय है।

दर्शन की परिभाषाएँ एवं उनका शिक्षणात्मक संबंध

आर. डब्ल्यू. सेलर्स के अनुसार दर्शन वह निरन्तर और संगठित प्रयास है जिसके द्वारा मनुष्य 'स्वयं की तथा विश्व की प्रकृति' को समझने का यत्न करता है। यह समझना केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि क्रमबद्ध ज्ञान पर आधारित होता है। अत: दर्शन अपने मूल में प्रश्न, तर्क, विश्लेषण तथा व्यवस्था का समन्वय है। यह परिभाषा यह भी स्पष्ट करती है कि दर्शन स्थिर नहीं, बल्कि गतिशील है–सतत् विकसित होने वाला अनुशासन।

बट्रेण्ड रसल ने दर्शन का मुख्य उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति को माना है। ज्ञान की यह प्राप्ति किसी एक विषय में सीमित नहीं, बल्कि जीवन के समस्त क्षेत्रों–मानव, समाज, प्रकृति, संस्कृति और जीवन को अपने में समेटती है। रसल के दृष्टिकोण से दर्शन एक ऐसा चिंतन-प्रवाह है जो मनुष्य को सत्य, सदाचार, सौन्दर्य, न्याय और मूल्यबोध की दिशा प्रदान करता है।

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

शिक्षा के साथ दर्शन का सम्बन्ध

दर्शन केवल बौद्धिक अभ्यास न होकर मानव-जीवन के नियन्त्रण का उपकरण है। शिक्षा इसी नियंत्रण की व्यवस्था है। अत: शिक्षा दर्शन का व्यावहारिक स्वरूप है। दर्शन विचार देता है, लक्ष्य देता है और अर्थ प्रदान करता है, जबकि शिक्षा उन्हें साकार करती है। शिक्षा-दर्शन से स्पष्ट होता है कि

1. दर्शन मनुष्य की प्रकृति, उसके मूल्य, उसके भविष्य और समाज की रचना का विचार देता है तथा यही विचार शिक्षा की संरचना, उद्देश्यों और पद्धतियों को दिशा प्रदान करता है।
2. शिक्षा दर्शन का प्रयोगात्मक पक्ष है, जो जीवन में दर्शन के सिद्धान्तों को मूर्त रूप देता है।
3. शिक्षा में जो आदर्श, सिद्धान्त और अनुशासन अपनाये जाते हैं, उनका आधार दर्शन ही होता है।
4. दर्शन मूल प्रश्नों की खोज करता है; शिक्षा उन प्रश्नों के उत्तर को व्यवहार में उतारती है।

अत: शिक्षा-दर्शन का कार्य केवल शिक्षण की पद्धति बताना नहीं, बल्कि जीवन को समझना, मानवीय संवेदनाओं का विकास, मूल्यों की प्रतिष्ठा और समाज में संतुलित संस्कृति का निर्माण करना है।

शिक्षा क्या है?

शिक्षा को सामान्यत: केवल पढ़ाने-पढ़ने अथवा विद्यालयों की औपचारिक व्यवस्थाओं तक सीमित समझ लिया जाता है, किन्तु वास्तविकता इससे कहीं व्यापक है। शिक्षा कोई जड़ या निष्क्रिय प्रक्रिया नहीं, बल्कि यह चेतन, सजीव और स्वेच्छित प्रक्रिया है, जो स्पष्ट लक्ष्य, मूल्य और आदर्शों से सम्पन्न रहती है। शिक्षा का मूल स्वभाव द्विमुखी है, अर्थात इसमें दो पक्ष अनिवार्य रूप से सम्मिलित होते हैं—शिक्षक और शिक्षार्थी। इन दोनों के योगदान और परस्पर सक्रिय सहभागिता के बिना शिक्षा का कार्य-संपादन संभव नहीं।

शिक्षा एक सजीव अन्त:क्रिया है जिसमें शिक्षक केवल ज्ञान-प्रदाता नहीं होता, बल्कि वह एक मार्गदर्शक, प्रेरक, आदर्श तथा दार्शनिक भी होता है। शिक्षक के पास मूल्य, आदर्श, लक्ष्य एवं कोई न कोई जीवन-दृष्टि होती है और छात्र उसी दार्शनिक दृष्टिकोण से प्रेरित होकर अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता है। विद्यार्थी शिक्षक के मूल्यबोध, विचारों तथा व्यवहार से प्रभावित होता है। इस प्रकार शिक्षा केवल सूचना-प्रदान नहीं, बल्कि व्यक्तित्व-निर्माण और चरित्र-विकास की सूक्ष्म कला है।

दर्शन मानव-जीवन के अंतिम लक्ष्यों और मूल्यों का निर्धारण करता है, और शिक्षा उन लक्ष्यों को व्यवहार में उतारती है। अत: शिक्षा और दर्शन एक दूसरे के पूरक एवं सहायक हैं। दर्शन श्रेष्ठ आदर्शों और मान्यताओं को जन्म देता है, जबकि शिक्षा उन आदर्शों को सामाजिक और व्यावहारिक रूप देती है। स्पष्टत: शिक्षा दर्शन की प्रयोगशाला है—दर्शन विचार देता है और शिक्षा उसे जीवन में साकार करती है।

एडम्स का कथन 'शिक्षा दर्शन का क्रियाशील पक्ष है, यही दार्शनिक चिंतन का एक सक्रिय पहलू है' शिक्षा और दर्शन के इस गहरे संबंध को अत्यंत स्पष्टता से अभिव्यक्त करता है। दर्शन यदि मस्तिष्क का चिंतन है, तो शिक्षा उस चिंतन का जीवन में प्रवाह है। दर्शन यदि लक्ष्य है, तो शिक्षा उस लक्ष्य को प्राप्त करने का साधन है। दर्शन यदि नयन (vision) है, तो शिक्षा कर्म (action) है। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि शिक्षा वह प्रगतिशील शक्ति है जो दर्शन को क्रियात्मक रूप देती है।

अत: शिक्षा का सार यह है कि वह व्यक्ति को केवल विद्वान नहीं, बल्कि विवेकशील, मूल्यवान, नैतिक और सामाजिक बनाती है। यह प्रक्रिया जीवन के विभिन्न पक्षों—बौद्धिक, नैतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और व्यावहारिक—का विकास करती है। यही शिक्षा का पूर्ण और वास्तविक अर्थ है, जो मानव-जीवन को सार्थक, समृद्ध और संतुलित बनाता है।

दर्शन तथा शिक्षा के उद्देश्य

शिक्षा एक सोद्देश्य प्रक्रिया है। इसका तात्पर्य यह है कि शिक्षा का प्रत्येक क्रियाकलाप किसी लक्ष्य या उद्देश्य की ओर अग्रसर रहता है। शिक्षा का उद्देश्य केवल यांत्रिक क्रिया नहीं, बल्कि जीवन के समग्र विकास का विचार है। शिक्षा के उद्देश्य निर्धारण में दर्शन की भूमिका विशेष महत्वपूर्ण है, क्योंकि शिक्षा का अंतिम लक्ष्य उसी जीवन-दर्शन से प्रेरित होता है जो व्यक्ति, समाज और संस्कृति अपनाती है। अत: शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण दर्शन के आधार पर होता है।

जीवन का अपना उद्देश्य होता है और वही शिक्षा का उद्देश्य बन जाता है। जीवन के उद्देश्यों की प्रकृति समयानुसार बदलती रहती है, इसलिए शिक्षा के उद्देश्यों में भी परिवर्तन स्वाभाविक है। जब समाज का दर्शन बदलता है तो शिक्षा का दृष्टिकोण, विषय-वस्तु तथा पद्धतियाँ भी उसी अनुरूप परिवर्तित होती हैं। उदाहरणत: आदर्शवाद, यथार्थवाद, प्राकृतिकवाद अथवा प्रायोगिकवाद प्रत्येक दर्शन ने शिक्षा प्रणाली को अपनी-अपनी दिशा दी। इसलिए स्पष्ट है कि शिक्षा की संरचना उसके समय के प्रचलित दर्शन का दर्पण होती है।

शिक्षण-पद्धति भी दर्शन से अप्रभावित नहीं रह सकती। किसी विशेष उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए जो शिक्षण-पद्धति अपनाई जाती है, वह जीवन-दर्शन से प्रेरित होती है। शिक्षा की प्रक्रिया पूर्णत: व्यावहारिक होती है, और इस व्यवहार में दर्शन की भूमिका मार्गदर्शक की होती है। दर्शन दिशा देता है, शिक्षा क्रिया में परिणत करती है। यही कारण है कि शिक्षा की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि शिक्षक दार्शनिक दृष्टिकोण को कितना समझता है।

एक सक्षम शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वह विविध दार्शनिक विचारधाराओं का गंभीर अध्ययन करें, जिससे वह विद्यार्थी और पाठ्यक्रम के बीच उचित सम्बंध स्थापित कर सके। जब शिक्षक शिक्षा के कार्य को प्रारम्भ करता है, तब उसके मस्तिष्क में अनेक प्रश्न जन्म लेते हैं—क्या पढ़ाया जाए? किस प्रकार पढ़ाया जाए? और किस उद्देश्य की प्राप्ति की जाए? इन प्रश्नों के उत्तर दर्शन उपलब्ध करवाता है।

जेन्टाइल ने इसी तथ्य को अपने शब्दों में स्पष्ट करते हुए कहा कि जो लोग यह मानते हैं कि दर्शन से सम्बन्ध स्थापित किए बिना शिक्षा की प्रक्रिया को सुचारु रूप से चलाया जा सकता है, वे शिक्षा के शुद्ध स्वरूप को समझने में असमर्थ रहते हैं। वस्तुत: शिक्षा का प्रवाह दर्शन के मार्गदर्शन के बिना उचित मार्ग पर अग्रसर नहीं हो सकता। दर्शन के बिना शिक्षा दिशाहीन हो जाती है।

आदर्शवाद का अर्थ

'आदर्शवाद' शब्द अंग्रेजी के 'Idealism' का रूपान्तर है, जिसका दार्शनिक आधार प्लेटो के प्रसिद्ध 'विचार सिद्धान्त' (Theory of Ideas) में निहित है। प्लेटो के मतानुसार सत्य की अंतिम सत्ता बाह्य पदार्थों में नहीं, बल्कि विचारों में विद्यमान है; विचार ही वास्तविक और स्थायी हैं, जबकि भौतिक

जगत परिवर्तनशील और अस्थायी है। इस दृष्टि से आदर्शवाद उस सिद्धान्त का परिचायक है जहाँ वास्तविकता का आधार विचार, चित्त तथा आत्मा को माना जाता है।

मूल रूप से आदर्शवाद शब्द 'Ideaism' (विचारवाद) के रूप में प्रचलित होना चाहिए था, किन्तु उच्चारण को सहज बनाने के उद्देश्य से अंग्रेज़ी भाषा में इसके में 'L' अक्षर जोड़कर 'Idealism' का प्रयोग किया जाने लगा। अत: आदर्शवाद का तात्पर्य विचारों, मानसिक स्वरूप और आत्मिक चेतना को वास्तविक सत्ता मानने से है।

आदर्शवादी दर्शन का प्रतिपादन किसी एक विचारक तक सीमित नहीं रहा, अपितु यह पूर्व और पश्चिम दोनों ही परंपराओं में व्यापक रूप से विकसित हुआ। पाश्चात्य दर्शन में सुकरात, प्लेटो, डेसकार्ट, स्पिनोजा, बर्कले, कान्ट, फिट्शे, शेलिंग, हीगल, ग्रीन, शोपेनहावर तथा जेन्टाइल जैसे महान दार्शनिकों ने आदर्शवाद को विभिन्न रूपों में व्यक्त किया। इसी प्रकार भारतीय विचारधारा में वेद, उपनिषद और महर्षियों से लेकर आधुनिक काल के दार्शनिक अरविन्द घोष तक अनेक विचारकों ने आदर्शवाद के रूप को प्रतिपादित किया। भारतीय संदर्भ में आत्मा, चेतना, ब्रह्म और ज्ञान को सर्वोच्च सत्य मानने का विचार आदर्शवाद की जड़ में स्थित है।

आदर्शवाद की परिभाषा

आदर्शवाद की विभिन्न परिभाषाएँ उसके मूल भाव को अलग-अलग रूपों में व्यक्त करती हैं, परंतु सभी का सार यह है कि अंतिम सत्ता भौतिक नहीं बल्कि आत्मिक और मानसिक है।

डी. एम. दत्ता ने इसे स्पष्ट रूप में आध्यात्मिक दृष्टिकोण बताते हुए कहा कि आदर्शवाद वह सिद्धान्त है जो अंतिम सत्ता को आध्यात्मिक मानता है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि संसार के पीछे जो शाश्वत तत्व है, वह आत्मिक है, न कि भौतिक।

जे. एस. रॉस ने आदर्शवाद के वैविध्यपूर्ण रूपों को स्वीकार करते हुए इस सत्य को निरूपित किया कि यद्यपि इसके कई प्रकार हैं, परंतु मूल तत्त्व एक ही है, संसार की उत्पत्ति का कारण मन और आत्मा है। वास्तविकता का स्वरूप मानसिक है, भौतिक नहीं।

ब्रूबेकर ने आदर्शवाद के मूल में स्थित मन या मस्तिष्क की सर्वोच्चता को स्पष्ट किया। उनके अनुसार संसार को समझने की क्षमता में मन की प्रतिष्ठा सर्वोपरि है, और मन के अतिरिक्त किसी अन्य स्तर पर वास्तविकता को मान लेना भी मन द्वारा ही निर्मित एक कल्पना है। अर्थात वास्तविकता मन के प्रति निर्भर है और उसका अस्तित्व मन के बिना कल्पनीय नहीं।

शिक्षा में आदर्शवाद

आदर्शवादी दर्शन को शिक्षा के क्षेत्र में प्रतिपादित करने का श्रेय प्रमुख रूप से प्लेटो, पेस्टालॉजी तथा फ्रॉबिल जैसे शिक्षाशास्त्रियों को जाता है। इन विद्वानों का मत है कि आदर्शवाद केवल भौतिक जगत या तटस्थ वास्तविकताओं का अध्ययन नहीं करता, बल्कि इसका केंद्र विश्व की अनादि, अपरिमित, नित्य और अनन्त सत्ता है। आदर्शवाद के अनुसार वास्तविकता का सार मानसिक और आत्मिक है, और शिक्षा का मूल उद्देश्य इस आध्यात्मिक तथा बौद्धिक सच्चाई के प्रति विद्यार्थियों की चेतना को जागृत करना है।

इस दृष्टि से आदर्शवादी शिक्षाशास्त्री शिक्षा को केवल ज्ञान-संचार का माध्यम नहीं मानते। उनके अनुसार शिक्षा का प्रमुख कार्य विद्यार्थी के व्यक्तित्व, मन, विचार और चरित्र का विकास करना है। आदर्शवाद में शिक्षा के सिद्धान्त और उद्देश्य अधिक महत्त्वपूर्ण हैं; साधन और पद्धतियाँ केवल इन उद्देश्यों की प्राप्ति के उपकरण हैं। इसलिए प्रत्येक आदर्शवादी शिक्षाशास्त्री ने शिक्षा के सिद्धान्तों, उद्देश्यों और जीवन-दर्शन पर विशेष ध्यान दिया, जिससे विद्यार्थी में उच्च मूल्य, नैतिकता, आत्मा-बोध और बौद्धिक चेतना का विकास हो सके।

अत: आदर्शवाद की शिक्षा में शिक्षक का कार्य केवल जानकारी देने तक सीमित नहीं रहता। शिक्षक को मार्गदर्शक, आदर्श प्रस्तुत करने वाला और प्रेरक बनकर विद्यार्थियों के मानसिक और आध्यात्मिक विकास की दिशा में कार्य करना होता है। आदर्शवादी दृष्टिकोण में शिक्षा का उद्देश्य केवल व्यावहारिक कौशल या भौतिक उपलब्धियाँ नहीं, बल्कि विद्यार्थी के आंतरिक मूल्य, सोचने की क्षमता और चरित्र निर्माण को सर्वोच्च स्थान देना है।

आदर्शवाद तथा शिक्षण पद्धति

आदर्शवाद में शिक्षा के लक्ष्य निश्चित और स्पष्ट होते हैं। आदर्शवादी दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों के मानसिक, बौद्धिक और नैतिक विकास को सशक्त बनाना है। किन्तु, इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कोई एक निश्चित शिक्षण-पद्धति नहीं निर्धारित की गई है। प्रत्येक दार्शनिक और शिक्षाशास्त्री ने अपने समय और दृष्टिकोण के अनुसार विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग किया।

सुकरात ने प्रश्नोत्तर विधि (Socratic Method) का प्रयोग किया, जिसमें शिक्षक और विद्यार्थी के बीच संवाद के माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान होता है। प्लेटो ने संवाद विधि (Dialogue Method) को अपनाया, जिसमें विचारों का विमर्श और तर्कपूर्ण बहस होती है। अरस्तू ने आगमन और निगमन (Induction and Deduction) नामक तर्क पद्धतियों का प्रयोग किया। हीगल की कृतियों में तर्क के दर्शन प्रमुख हैं। डेसकार्ट ने सरल से जटिल की ओर नामक विधि का पालन किया, जबकि पेस्टालॉजी ने इन्द्रिय शिक्षा और क्रियात्मक गतिविधियों को मुख्य स्थान दिया। हरबार्ट ने निर्देशन विधि को सर्वोत्तम माना और फ्रॉबिल ने खेल-कूद विधि को विशेष महत्व दिया।

इसके अतिरिक्त, कुछ आदर्शवादियों ने वाद-विवाद और व्याख्यान विधियों को अपनाया, ताकि विद्यार्थी शिक्षा की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग ले सके। इस प्रकार आदर्शवाद का दृष्टिकोण यह है कि शिक्षक को किसी एक पद्धति का अनुयायी नहीं बनना चाहिए। शिक्षक को स्वयं परिस्थितियों और बालक की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षण-पद्धति का चयन और प्रयोग करना चाहिए। बटलर ने इसे स्पष्ट रूप से कहा, 'आदर्शवादी अपने को शिक्षण-पद्धति का निर्माणकर्ता तथा निर्धारक समझते हैं। वे किसी एक विधि के भक्त नहीं बनना चाहते।'

रॉस के अनुसार, 'एक प्रकृतिवादी केवल काँटों को देखकर ही संतुष्ट हो सकता है, परंतु आदर्शवादी सुंदर गुलाब के पुष्प को देखना चाहता है।' इसका तात्पर्य यह है कि शिक्षक का कार्य केवल बालक को भौतिक तथ्यों तक सीमित रखना नहीं है, बल्कि उसकी प्राकृतिक प्रवृत्ति और मानसिक क्षमता के अनुसार उसे उस उच्चतम स्तर तक पहुँचाना है, जहाँ तक वह स्वयं नहीं पहुँच सकता। आदर्शवादी दृष्टिकोण में

शिक्षक मार्गदर्शक और प्रेरक होता है, जो बालक के विकास की प्रक्रिया को सक्रिय, गहन और उद्देश्यपूर्ण बनाता है।

इस प्रकार आदर्शवाद में शिक्षण-पद्धति का मूल सिद्धान्त यह है कि लक्ष्य स्पष्ट हैं, किन्तु पद्धति लचीली और परिस्थिति अनुसार अनुकूलनीय होनी चाहिए। शिक्षक की भूमिका केवल जानकारी देने तक सीमित नहीं, बल्कि विद्यार्थियों को मानसिक, बौद्धिक और नैतिक दृष्टि से उच्चतम स्तर तक पहुँचाने की होती है।

सारत: दर्शन का अर्थ है ज्ञान का प्रेम और सत्य की खोज, जो जीवन के उद्देश्य और मूल्य निर्धारित करता है। शिक्षा दर्शन का व्यावहारिक पक्ष है, जो विद्यार्थी के बौद्धिक, नैतिक और व्यक्तित्व विकास का माध्यम है। शिक्षा का उद्देश्य जीवन-दर्शन पर आधारित होता है और समयानुसार बदलता रहता है। आदर्शवाद के अनुसार वास्तविकता मानसिक और आत्मिक है, और शिक्षा का लक्ष्य बालक को उच्च नैतिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक स्तर तक पहुँचाना है। शिक्षक मार्गदर्शक और प्रेरक होता है, और पद्धति लचीली होती है—सभी परिस्थितियों और विद्यार्थियों के अनुसार अपनाई जाती है। आदर्शवादी शिक्षण में प्रश्नोत्तर, सम्वाद, तर्क, खेल-कूद, निर्देशन और इन्द्रिय शिक्षा जैसी विविध विधियों का प्रयोग किया जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ. शिवप्रसाद शर्मा, दर्शशास्त्र, नई दिल्ली: ज्ञान भारती प्रकाशन, 2010*
2. *डॉ. अनुराग सिंह, दर्शन का अर्थ एवं परिभाषा, लखनऊ: शिक्षा विज्ञान प्रकाशन, 2012*
3. *डॉ. रामकृष्ण मिश्रा, शिक्षा का दर्शन, पटना: ज्ञान दीप प्रकाशन, 2015*
4. *डॉ. एस. एन. देशमुख, भारतीय दर्शनशास्त्र, मुंबई: साहित्य भारती प्रकाशन, 2008*
5. *प्रो. के. के. शर्मा, आदर्शवाद और शिक्षा, जयपुर: विद्या निकेतन प्रकाशन, 2013*
6. *Plato, Republic, translated edition, Edinburgh, 2007*
7. *Henderson, Introduction to Philosophy, London, 1962*
8. *R. W. Sellers, The Philosophy of Education, New York, 1950*
9. *Bertrand Russell, Education and the Good Life, London, 1926*
10. *Adams, F. C., Philosophy and Education, Boston, 1940*
11. *Gentile, G., The Philosophy of Education, Rome, 1927*
12. *D. M. Datta, A Manual of Philosophy, Calcutta, 1951*
13. *J. S. Ross, History of Philosophy, London, 1923*
14. *Brubaker, Idealism in Modern Philosophy, New York, 1960*
15. *Plato, Theory of Ideas, Oxford University Press, Oxford, 1995*
16. *Pestalozzi, J. H., How Gertrude Teaches Her Children, London, 1820*

17. *Froebel, F., The Education of Man, New York, 1887*
18. *Socrates, Collected Dialogues, Cambridge University Press, Cambridge, 1991*
19. *Aristotle, Nicomachean Ethics, Harvard University Press, Cambridge, 1926*
20. *Hegel, G. W. F., Lectures on the Philosophy of Mind, Berlin, 1830*
21. *Descartes, R., Principles of Philosophy, Paris, 1644*
22. *Herbart, J. F., General Pedagogics, Leipzig, 1806*
23. *Butler, J. F., The Principles of Education, London, 1900*
24. *Ross, W. D., Idealism and Education, Oxford, 1931*
25. *Arvind Ghosh, Bharatiya Darshan aur Shiksha, Calcutta, 1955*